## प्रकरण बारह

# अमेरिका की यात्रा

*आज जहाज बहुत सहज गति से चल रहा है। आज मैं पहले से ठीक हूँ। किन्तु मुझे श्रीवृन्दावन और अपने भगवान्—श्रीगोविन्द, गोपीनाथ तथा राधा-दामोदर का वियोग सता रहा है। सान्त्वना की बात है तो बस श्रीचैतन्य चरितामृत—जिसमें से मैं भगवान् चैतन्य की लीला का अमृत-पान कर रहा हूँ। भगवान् चैतन्य के आदेशानुसार, श्री भक्तिसिद्धान्त सरस्वती की आज्ञा का पालन करने के लिए ही मैंने भारत-भूमि का त्याग किया है। मुझमें कोई योग्यता नहीं है, किन्तु कृष्णकृपामूर्ति प्रभुपाद के आदेश का पालन करने के लिए ही मैंने यह जोखिम उठाया है। वृन्दावन से इतनी दूर मैं उनकी कृपा पर ही पूर्णतया अवलम्बित हूँ।*

—जलदूत डायरी

सितम्बर १०, १९६५

जलदूत सिन्धिया स्टीम नैवीगेशन कम्पनी का एक नियमित भारवाहक जहाज है, किन्तु उसमें एक यात्री-कक्ष भी है। १९६५ ई. के अगस्त-सितम्बर में, कलकत्ता से न्यूयार्क की यात्रा की अवधि में इस यात्री-कक्ष के अधिवासी "श्री अभयचरणारविन्द भक्तिवेदान्त स्वामी" थे, जिनकी अवस्था उनहत्तर वर्ष लिखी हुई थी और जिन्हें जहाज पर "मानार्थ टिकट और भोजन की व्यवस्था" की टिप्पणी वाले टिकट पर लाये गये थे।

जलदूत की यात्रा शुक्रवार, १३ अगस्त को सवेरे ९ बजे कैप्टन अरुण पंड्या के नियंत्रण में आरम्भ हुई। जहाज पर कैप्टन पंड्या की पत्नी भी उनके साथ थीं। अपनी डायरी में श्रील प्रभुपाद ने लिखा, "कक्ष बहुत सुविधाजनक है; भगवान् श्रीकृष्ण को

धन्यवाद है कि उन्होंने सुमति मोरारजी को ये सब व्यवस्था करने की प्रेरणा दी। मुझे सब तरह का आराम है।" किन्तु १४ अगस्त को उन्होंने लिखा, "समुद्री बीमारी, सिर चकराना, उल्टी—बंगाल की खाड़ी। भारी वर्षा और अधिक बीमारी।"

१९ अगस्त को जब जहाज सीलोन (जो अब श्रीलंका कहलाता है) के कोलम्बो बन्दरगाह में पहुँचा, तो प्रभुपाद को समुद्री बीमारी से राहत मिली। कप्तान उन्हें तट पर ले गये और उन्होंने कार द्वारा कोलम्बो के चारों ओर चक्कर लगाया। तब जहाज भारत के पश्चिमी तट पर स्थित कोचीन की ओर बढ़ा। उस साल भगवान् कृष्ण के आविर्भाव दिवस, जन्माष्टमी का पर्व २० अगस्त को पड़ा। प्रभुपाद ने उस अवसर का लाभ उठाकर नाविकों को भगवान् कृष्ण के दर्शन के बारे में बताया और जो प्रसाद उन्होंने अपने लिए बनाया था, उसे उनके बीच वितरित किया। २१ अगस्त उनका सत्तरवाँ जन्मदिवस था, जो बिना किसी रस्म के उन्होंने समुद्र पर मनाया। उसी दिन जहाज कोचीन पहुँचा और श्रील प्रभुपाद के ट्रंक, जिनमें *श्रीमद्भागवत* की पुस्तकें भरी थीं और जो बम्बई से भेजे गये थे, जहाज पर लादे गये।

२३ अगस्त को जहाज लाल सागर पहुँच गया था, जहाँ प्रभुपाद को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। उन्होंने अपनी डायरी में लिखा, "वर्षा, समुद्री बीमारी, चक्कर, सिर-दर्द, भूख का अभाव, उल्टी।" ये लक्षण बने रहे, किन्तु उनकी बीमारी समुद्री बीमारी से कहीं अधिक थी। छाती के दर्द से उन्हें लगा कि वे किसी भी क्षण मर सकते हैं। दो दिन के अन्दर उन्हें दो बार दिल का दौरा पड़ा। अपने मिशन के उद्देश्य का चिन्तन करते हुए उन्होंने कष्ट सहन किया, किन्तु दो दिनों के गहरे दौरों के बाद उनके मन में आया कि यदि एक दौरा और पड़ा, तो निश्चय ही वे बच नहीं सकेंगे।

दूसरे दिन रात में प्रभुपाद ने एक स्वप्न देखा। भगवान् कृष्ण अपने अनेक रूपों में एक नाव खे रहे थे और उन्होंने प्रभुपाद से कहा कि उन्हें डरना नहीं चाहिए, अपितु आगे बढ़ते जाना चाहिए। प्रभुपाद को भगवान् कृष्ण के संरक्षण का विश्वास हुआ और दिल के तीव्र दौरे फिर नहीं पड़े।

*जलदूत* स्वेज नहर में १ सितम्बर को पहुँचा और २ सितम्बर को उसने पोर्ट सईद में लंगर डाला। श्रील प्रभुपाद ने कप्तान के साथ नगर का परिभ्रमण किया और कहा कि नगर उन्हें पसन्द आया। ६ सितम्बर तक वे अपनी बीमारी से कुछ अच्छे हो गये थे और दो सप्ताह के बाद पहली बार फिर नियमित भोजन करने लगे थे। अपनी खिचड़ी और पूरियाँ वे स्वयं पकाते थे। उन्होंने अपनी डायरी में लिखा कि धीरे धीरे उनमें पुनः शक्ति आने लगी थी।

वृहस्पति, ९ सितम्बर,

आज तीसरे पहर ४ बजे हमें अटलांटिक महासागर में पहुँचे चौबीस घंटे हो रहे हैं। पूरा दिन आकाश साफ और शान्त रहा। मैं नियमित रूप से भोजन कर रहा हूँ और संघर्ष के लिए कुछ शक्ति मुझ में आ गई है। जहाज की गति कुछ टेढ़ी-मेढ़ी हो गई है और मुझे हल्का सिर-दर्द भी हो रहा है। किन्तु मैं संघर्ष कर रहा हूँ और मेरे जीवन का अमृत, उसकी सारी शक्ति का स्रोत श्री चैतन्य चरितामृत है।

शुक्रवार, १० सितम्बर

आज जहाज बहुत सहज गति से चल रहा है। आज मेरी तबियत पहले से ठीक है। किन्तु मुझे श्री वृन्दावन और मेरे भगवान् श्री गोविन्द, गोपीनाथ तथा राधा-दामोदर का वियोग सता रहा है। मेरी सान्त्वना का एकमात्र स्रोत श्री चैतन्य चरितामृत है, जिससे मैं भगवान् चैतन्य की लीला के अमृत का रसास्वादन कर रहा हूँ। मैंने भारत-भूमि का परित्याग केवल भगवान् चैतन्य के आदेशानुसार, श्री भक्तिसिद्धान्त सरस्वती की आज्ञा का पालन करने के लिए किया है। मुझमें कोई योग्यता नहीं है, किन्तु कृष्णकृपामूर्ति प्रभुपाद के आदेश का पालन करने के लिए ही मैंने यह जोखिम उठाया है। वृन्दावन से इतनी दूर मैं उनकी कृपा पर ही पूर्णतया अवलम्बित हूँ।

यात्रा के बीच श्रील प्रभुपाद कभी-कभी जहाज की छत के जंगले के किनारे खड़े हो जाते थे और आकाश एवं सागर की ओर देखते हुए चैतन्य चरितामृत, वृन्दावन धाम और पश्चिम में जाकर प्रचार करने के अपने आध्यात्मिक गुरु के आदेश के विषय में सोचा करते थे। कप्तान की पत्नी श्रीमती पंड्या ने, जिन्हें श्रील प्रभुपाद 'एक बुद्धिमती और विदुषी महिला' मानते थे, उनके भविष्य के विषय में बताया था कि यदि वे अपने स्वास्थ्य में इस संकट की घड़ी को पार कर गये, तो यह भगवान् कृष्ण की कृपा का सूचक होगा।

सन् १९६५ की वह समुद्री यात्रा *जलदूत* के लिए शान्तिपूर्ण रही। कप्तान ने कहा कि अपने सम्पूर्ण कार्यकाल में उन्होंने अटलांटिक को पार करना इतना शान्तिपूर्ण कभी नहीं पाया था। प्रभुपाद ने उत्तर दिया कि वह शान्ति भगवान् कृष्ण के अनुग्रह के कारण थी; श्रीमती पंड्या ने प्रभुपाद से आग्रह किया कि वापसी यात्रा में भी वे उनके साथ रहें, जिससे वे अटलांटिक को एक बार फिर शान्ति के साथ पार कर सकें। श्रील प्रभुपाद ने अपनी डायरी में लिखा, "यदि अटलांटिक ने अपना सामान्य रूप दिखाया होता, तो कदाचित् मैं मर गया होता। किन्तु भगवान् कृष्ण ने जहाज का भार अपने ऊपर ले लिया था।"

१३ सितम्बर को प्रभुपाद ने अपनी डायरी में लिखा, "यात्रा का बत्तीसवां दिन एक बाटी खिचड़ी पकायी। यह स्वादिष्ट लगी, इसलिए मैं कुछ भोजन कर सका। आज मैंने अपना हृदय अपने साथी भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति खोल दिया है। इस विषय में मेरी रची हुई एक बंगाली कविता है।"

यह कविता भगवान् कृष्ण के प्रति प्रार्थना थी और यह उस उद्देश्य में प्रभुपाद के भक्तिमय विश्वास को व्यक्त करने वाली है, जिसे उन्होंने अपने आध्यात्मिक गुरु के आदेश के कारण शिरोधार्य किया था। उस कविता के कुछ प्रारम्भिक पदों का अनुवाद इस प्रकार है (पूरी बंगाली कविता के लिए परिशिष्ट देखिए।) :

> हे बन्धुओं, मैं बलपूर्वक तुमसे कहता हूँ कि परमेश्वर भगवान् कृष्ण से तुम सौभाग्य तभी प्राप्त कर सकोगे, जब श्रीमती राधारानी तुमसे प्रसन्न होंगी।
>
> श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर, जो माता शची के पुत्र प्रभु गौरांग (भगवान् चैतन्य) को अतिशय प्रिय हैं, परमेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति अपनी सेवा में अद्वितीय हैं। वे ऐसे महान् साधु-स्वभाव के आध्यात्मिक महापुरुष हैं, जो विश्व के विभिन्न स्थानों में कृष्ण के प्रति अपनी प्रगाढ़ भक्ति अर्पित करते हैं।
>
> उनकी दृढ़ इच्छा से भगवान् गौरांग का पवित्र नाम पाश्चात्य जगत के सभी देशों में फैल जायेगा। पृथ्वी पर सभी महानगरों, नगरों और गाँवों में, सभी महासागरों, सागरों, नदियों और जल-प्रवाहों में प्रत्येक प्राणी कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन करेगा।
>
> ज्यों-ज्यों श्री चैतन्य महाप्रभु की अनन्त कृपा सब दिशाओं पर विजय प्राप्त करेगी, त्यों-त्यों दिव्यानंद के महाप्लावन से जगत आच्छादित होता जायेगा। जब सब पापी, दुखी प्राणी सुखी हो जायेंगे, तब वैष्णवों की कामना पूर्ण होगी।
>
> यद्यपि मेरे गुरु महाराज ने मुझे यह लक्ष्य सिद्ध करने का आदेश दिया है, किन्तु मैं इस कार्य को पूरा करने के योग्य अथवा सक्षम नहीं हूँ। मैं अत्यन्त पतित और क्षुद्र हूँ। अतः हे प्रभु, मैं अब आपकी कृपा की याचना करता हूँ, जिससे मैं योग्य बन सकूँ। आप सर्वाधिक बुद्धिमान और अनुभवी हैं...

कविता का अन्त इस प्रकार होता है :

> आज आपका स्मरण मुझे बहुत अच्छे तरीके से हुआ। क्योंकि मुझे आपकी उत्कट कामना है, अतः मैंने आपका स्मरण किया। मैं आपका शाश्वत सेवक हूँ,

इसलिए मैं आपका साहचर्य इतना अधिक चाहता हूँ। हे भगवान् कृष्ण, आपके
अतिरिक्त सफलता का अन्य कोई साधन नहीं है।

वैसी ही सीधी तथ्यात्मक शैली में, जिसमें उन्होंने तिथि, मौसम और अपने स्वास्थ्य की स्थिति का उल्लेख किया था, अब उन्होंने अपने "सखा भगवान् कृष्ण" पर अपनी असहाय निर्भरता का और कृष्ण के वियोग के भावोन्माद में अपनी तन्मयता का वर्णन किया। उन्होंने गुरु और शिष्य के बीच के सम्बन्ध का वर्णन किया और अपने निजी आध्यात्मिक गुरु, श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धान्त सरस्वती की प्रशंसा की "जिनकी दृढ़ इच्छा से भगवान् गौरांग का पवित्र नाम पाश्चात्य जगत के सभी देशों में फैल जायेगा।" उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि उनके आध्यात्मिक गुरु ने कृष्णभावनामृत का विश्वव्यापी प्रसार करने के इस लक्ष्य को पूरा करने का उन्हें आदेश दिया था और अपने आपको इसके अयोग्य पाकर उन्होंने भगवान् कृष्ण से शक्ति के लिए प्रार्थना की। अन्तिम पदों में भगवान् कृष्ण के साथ श्रील प्रभुपाद के प्रत्यक्ष सम्बन्ध की अप्रत्याशित विश्वस्त झलक मिलती है। प्रभुपाद ने कृष्ण को अपना 'प्रिय मित्र' कहकर सम्बोधित किया और व्रज-भूमि में फिर विचरण करने के आनन्द की कामना की। उन्होंने लिखा कि कृष्ण का यह स्मरण उन्हें भगवान् की सेवा करने की तीव्र इच्छा के कारण आया। बाह्यतः श्रील प्रभुपाद बड़ी बेचैनी का अनुभव कर रहे थे; जहाज पर वे एक महीना बिता चुके थे और उन्हें दिल के दौरे पड़ चुके थे और बार-बार समुद्री बीमारी हो चुकी थी। इसके अतिरिक्त, यदि इन कठिनाइयों से वे उबर भी जाँए, तो भी अमेरिका में उनके पहुँचने पर और भी अनेक कठिनाइयाँ उनके सामने आयेंगी। परन्तु अपने आध्यात्मिक गुरु की इच्छा को याद करते हुए, चैतन्य चरितामृत के अध्ययन से शक्ति प्राप्त करते हुए और अपनी प्रार्थना में भगवान् कृष्ण के प्रति अपने मन की बात कहते हुए प्रभुपाद आश्वस्त बने रहे।

कलकत्ता से ३५ दिन की यात्रा के बाद *जलदूत* १७ सितम्बर १९६५ को ५-३० बजे प्रात: बोस्टन स्थित कामनवेल्थ घाट पर पहुँचा। जहाज को न्यूयार्क शहर के लिए प्रस्थान करने के पूर्व बोस्टन में थोड़ी देर रुकना था। अमेरिका में प्रभुपाद ने जो वस्तुएँ सर्वप्रथम देखीं, उनमें बन्दरगाह के एक मालगोदाम के अग्रभाग पर अंकित 'ए एंड पी' अक्षर थे। सागरतल पर फैल रहे प्रात:काल के धुंधले प्रकाश में बन्दरगाह में खड़े जहाज, झींगा मछलियों के रैक, सलेटी रंग की बड़ी इमारतें और दूरी पर ऊपर उठती बोस्टन की क्षितिज-रेखा दिखाई देने लगी।

प्रभुपाद को बोस्टन में संयुक्त राज्य के अप्रवासी और सीमा-शुल्क की औपचारिकता से गुजरना पड़ा। उनके अनुमति-पत्र के अनुसार वे तीन महीने तक रुक सकते थे और एक

अधिकारी ने उस पर उनके संभावित प्रस्थान की तिथि की मुहर लगा दी। कप्तान पंड्या ने प्रभुपाद को बोस्टन में, जहाँ वे कुछ खरीददारी करना चाहते थे, परिभ्रमण के लिए आमंत्रित किया। वे एक पुलिया पार करके एक व्यस्त व्यावसायिक क्षेत्र में गये, जो प्राचीन गिरजाघरों, गोदामों, कार्यालयों, शराब-घरों, भड़कीली किताबों की दुकानों, रात्रि-क्लबों और खान-पान-होटलों से भरा था। प्रभुपाद ने सरसरी निगाह से नगर का अवलोकन किया, किन्तु बोस्टन में उनके अल्पकालिक निवास की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना, इस तथ्य के अतिरिक्त कि अब उनका पदार्पण अमेरिका में हो गया था, यह थी कि उन्होंने कामनवेल्थ घाट पर 'मार्किणे भागवत-धर्म' (अमेरिका में कृष्णभक्ति का उपदेश) शीर्षक एक दूसरी बंगाली कविता लिखी। उस दिन जहाज पर उन्होंने जो पद लिखे, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं : *

मेरे प्रिय भगवान् कृष्ण, आप इस तुच्छ प्राणी पर इतने दयालु हैं, किन्तु मुझे मालूम नहीं कि आप मुझे यहाँ क्यों लाए हैं। अब आप मेरे साथ जो चाहें सो करें।

किन्तु लगता है कि आपको यहाँ पर कुछ काम है, अन्यथा आप मुझे इस डरावने स्थान में क्यों लाते?

यहाँ के अधिकतर लोग तमोगुण और रजोगुण से लिप्त हैं। भौतिक जीवन में डूबे हुए वे अपने आपको अत्यन्त सुखी तथा सन्तुष्ट मानते हैं और इसलिए उनको वासुदेव (कृष्ण) के दिव्य सन्देश में कोई रुचि नहीं है। मैं नहीं जानता कि वे इसे किस प्रकार समझ सकेंगे।

किन्तु मैं जानता हूँ कि आपकी अहैतुकी कृपा से सब कुछ सम्भव है, क्योंकि आप परम कुशल योगी हैं।

भला ये लोग भक्ति-रस को कैसे समझ पाएँगे? हे प्रभो, मैं केवल आपकी कृपा की याचना करता हूँ, जिससे आपके सन्देश के प्रति मैं उन्हें आश्वस्त कर सकूँ।

आपकी इच्छा से सारे जीव माया के वश में हैं, अत: आप चाहें, तो आपकी इच्छा से वे माया के चंगुल से छूट भी सकते हैं।

मेरी कामना है कि आप उनका उद्धार करें, अत: यदि आप उनका उद्धार करना चाहें तभी वे आपके सन्देश को समझ सकेंगे...

मै उन्हें कृष्णभावनामृत का सन्देश कैसे समझा सकूँगा? मैं अत्यन्त अभागा, अयोग्य तथा अत्यन्त पतित हूँ। इसलिए मैं आपके आशीर्वाद की याचना करता हूँ, जिससे मैं उन्हें आश्वस्त कर सकूँ, क्योंकि अपने आप मैं ऐसा करने में अक्षम हूँ।

हे प्रभु, अपने विषय में बताने के लिए आप मुझे यहाँ किसी न किसी तरह लाए हैं। हे मेरे प्रभु, अब यह आपके हाथ में है कि आप मुझे सफल बनाएँ या असफल होने दें।

हे समस्त विश्व के आध्यात्मिक स्वामी, मैं आपके सन्देश को केवल दोहरा सकता हूँ। अत: यदि आप चाहें तो मेरी वाणी की शक्ति आप उनके लिए सुबोध बना सकते हैं।

आपकी अहैतुकी कृपा से ही मेरे शब्द विमल बनेंगे। मेरा विश्वास है कि जब यह दिव्य सन्देश उनके हृदयों में प्रविष्ट होगा, तब वे निश्चय ही प्रसन्नता का अनुभव करेंगे और जीवन के समस्त दुखों से मुक्त हो जाएंगे।

हे प्रभु, मैं आपके हाथों की कठपुतली के समान हूँ। अत: यदि आप मुझे यहाँ नचाने के लिए लाए हैं, तो मुझे जितना चाहें, नचाइए।

मुझमें न भक्ति है, न ज्ञान, किन्तु मुझे कृष्ण के पवित्र नाम में प्रगाढ़ श्रद्धा है। मुझ भक्तिवेदान्त की उपाधि दी गई है और अब, यदि आप चाहें तो भक्तिवेदान्त के वास्तविक तात्पर्य को सार्थक बनाएँ।

हस्ताक्षर : अत्यन्त अभागा, अकिंचन याचक
ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी,
*जलदूत* जहाज पर कामनवेल्थ घाट पर
अवस्थित,
बोस्टन, मेसाचुसेट्स, संयुक्त राज्य अमेरिका,

दिनांक १८ सितम्बर १९६५

अब वे अमेरिका में थे। वे अमेरिका के एक प्रमुख नगर में थे, जो अरबों-खरबों की सम्पत्ति से, लाखों की जन-संख्या से परिपूर्ण था और अपने ढर्रे पर बने रहने के लिए दृढ़-निश्चय था। प्रभुपाद ने बोस्टन को एक विशुद्ध कृष्ण-भक्त के दृष्टिकोण से देखा। उन्होंने नारकीय नागरिक जीवन को, भौतिक सुख की माया के प्रति समर्पित लोगों को देखा। उनका सेवा-भाव और प्रशिक्षण उन्हें प्रेरित कर रहा था कि वे उन लोगों को दिव्य ज्ञान और संरक्षणकारी कृष्णभावनामृत का सन्देश दें, फिर भी वे अपने आपको बहुत अक्षम, पतित और असमर्थ अनुभव कर रहे थे। वे मात्र एक "क्षुद्र भिक्षुक" थे, धन-विहीन। समुद्री यात्रा में वे दिल के दो दौरों से मुश्किल से बच पाए थे; वे भिन्न भाषा बोलते थे; विचित्र वेश में रहते थे—तभी भी वे लोगों को सिखाने आये थे कि वे मांस-भक्षण, अवैध

यौन-सम्बन्ध, मादक द्रव्य-सेवन, द्यूत-क्रीड़ा छोड़ दें और भगवान् कृष्ण की उपासना करें। उस कृष्ण की जो उन लोगों के लिए एक पौराणिक हिन्दू देवता थे। भला ऐसी परिस्थिति में प्रभुपाद क्या कर सकते थे?

असहाय होकर उन्होंने सीधे भगवान् से अपने मन की बात कही, "मेरी कामना है कि आप उनका उद्धार करें। मैं आपके आशीर्वाद की याचना करता हूँ, जिससे मैं उन्हें आश्वस्त कर सकूँ।" और उन्हें आश्वस्त करने के लिए वे भगवान् के पवित्र नाम की शक्ति और *श्रीमद्भागवत* पर निर्भर होंगे। यह दिव्य वाणी उनके हृदयों से भौतिक सुखों की इच्छा को दूर कर देगी और उनमें कृष्ण के लिए प्रेमाभक्ति जागृत कर देगी। बोस्टन की सड़कों पर चलते हुए प्रभुपाद अवगत थे कि वहाँ तमोगुण और रजोगुण की शक्ति का प्रभुत्व था, किन्तु दिव्य प्रक्रिया में उनका विश्वास था। वे छोटे थे, किन्तु भगवान् असीम थे और भगवान् कृष्ण थे, जो उनके प्रिय सखा थे।

• • •

*जलदूत* १९ सितम्बर को न्यूयार्क बन्दरगाह पहुँचा और उसने ब्रुकलिन घाट पर सत्रहवीं सड़क पर लंगर डाला। भक्तिवेदान्त स्वामी ने विस्मयकारी मैनहट्टन क्षितिज को, एम्पायर स्टेट इमारत को और पहले के लाखों यात्रियों और प्रवासियों की भाँति, स्टेचू आफ लिबर्टी (स्वतंत्रता की प्रतिमा) को देखा।

श्रील प्रभुपाद एक वृन्दावनवासी का उपयुक्त वेश धारण किये थे। उन्होंने कण्ठी माला और सादी सूती धोती धारण कर रखी थी; उनके हाथ में जप-माला थी और वे एक पुरानी चादर ओढ़े थे। उनका रंग सुनहरा था, सिर घुटा था, पीछे शिखा थी, मस्तक पर श्वेत वैष्णव तिलक लगा था। उन्होंने सफेद रबर की नुकीली चप्पलें पहन रखी थी, जो भारत में साधुओं के लिए असामान्य बात नहीं है। किन्तु न्यूयार्क में ऐसे वैष्णव के समान व्यक्ति को प्रकट होते किसी ने कभी नहीं देखा था, या उसका स्वप्न में भी साक्षात्कार नहीं किया था? वे सम्भवतया पहले वैष्णव संन्यासी थे, जो न्यूयार्क में अपनी निजी वेशभूषा में पहुँचे थे। पर न्यूयार्क के लोग ऐसे विचित्र नवागन्तुकों पर विशेष ध्यान न देने की कला में कुशल है।

श्रील प्रभुपाद को केवल अपना भरोसा था। उनके एक जामिन श्रीमान् अग्रवाल, पेन्सिलवेनिया में कहीं रहते थे। प्रभुपाद को लेने अवश्य ही कोई आयेगा, यद्यपि जहाज से उतरकर घाट पर चलते समय "मुझे मालूम नहीं था कि बाएँ मुड़ना है या दाएँ।" गोदी की सारी औपचारिकताएँ पूरी कर लेने पर पेन्सिलवेनिया-स्थित अग्रवाल-परिवार द्वारा भेजे गये यात्रिक सहायता-संस्था का एक प्रतिनिधि उन्हें मिला। उसने प्रभुपाद को

मैनहट्टन के सिंधिया टिकट कार्यालय में उसके साथ जाने को कहा, जहाँ वे भारत की अपनी वापसी यात्रा के लिए आरक्षण करा सकें।

सिंधिया कार्यालय में प्रभुपाद की बात जोसेफ फोरस्टर नामक टिकट एजेंट से हुई, जो इस असाधारण यात्री की वैष्णव वेशभूषा, उसके अल्प सामान और प्रत्यक्ष विपन्नता से प्रभावित हुआ। उसने प्रभुपाद को एक पुजारी समझा। सिंधिया के यात्रियों में अधिकतर व्यापारी या परिवार वाले लोग होते थे, इसलिए फोरस्टर ने कभी ऐसे यात्री को नहीं देखा था, जो भारत की पारम्परिक वैष्णव वेशभूषा धारण किये हो। उसने श्रील प्रभुपाद को एक 'सुखद सज्जन" के रूप में पाया, जिसने *जलदूत* से यात्रा के दौरान प्राप्त उत्तम आवास और सद्व्यवहार की प्रशंसा की। प्रभुपाद ने फोरस्टर से भारत लौटने वाले किसी जहाज पर अपने लिए स्थान सुरक्षित करवाने का अनुरोध किया। उनकी योजना दो महीने में भारत लौटने की थी और उन्होंने श्रीमान् फोरस्टर से कहा कि वे उनसे सम्पर्क बनाए रखेंगे। श्रील प्रभुपाद के पास नकद केवल चालीस रुपए थे, जिसे वे स्वयं "न्यूयार्क में कुछ घंटों का खर्च" कहते थे। इसके अतिरिक्त उनके पास बीस डालर और थे, जिसे उन्होंने कप्तान पंड्या को भागवत के तीन खंड बेचकर प्राप्त किया था। उनके हाथ में छाता तथा एक सूटकेस था और आगे-आगे यात्रिक-सहायता का प्रतिनिधि उन्हें ले जा रहा था। इस तरह वे पोर्ट अथारिटी बस अड्डे की ओर बढ़े, जहाँ से उन्हें बटलर के लिए यात्रा आरम्भ करने की व्यवस्था करनी थी।